

अप्रैल-जून, 2026

वर्ष : 27 अंक : 2

हिन्दी जगत

विश्व हिन्दी न्यास
का
त्रैमासिक प्रकाशन



विश्व हिन्दी न्यास

WORLD HINDI FOUNDATION, INC.

A Tax-Exempt Charitable & Educational Foundation (ID 31-1679275)

Website : www.worldhindifoundation.org

Board of Directors

Executive Director

Dr. Anchala Sobrin

20 Presidential Way, Hopewell Junction, NY 12533

Tel: (845) 226 2542 | Email: hindinyas@gmail.com

Secretary

Mrs. Padmini Prasad

1282 Royal Pointe Lane, Ormond Beach, FL 32174

Tel: (845) 764 1058 | Email: prasad.padmini@gmail.com

Treasurer

Mr. Pradeep Agarwal

25, Oak Tavern Circle, Branchburg NJ 08876

Tel: (646) 472 6320 | Email: pnagarwal@gmail.com

Directors

Dr. Surendra Nath Pandey, GA (706) 610 1601

pandeysn@yahoo.com

Mrs. Seema Khurana, NY (845) 227 8605

seemakhurana1223@gmail.com

Mrs. Sharmishtha Dutta Banerjee NY (845) 764 9014

sduttabanerjee@gmail.com

Mr. Anil Agarwal, NY (718) 271 3129

manishi.anil@gmail.com

Prof. Suresh Rituparna, India (+91) 09810453245

rituparna.suresh@gmail.com

Dr. Shyam Narayan Shukla, CA (510) 770-1218

shuklas@comcast.net

Dr. Ila Prasad, TX (832) 446-3677

ila_prasad1@yahoo.com

Chapter Directors

Buffalo: Mrs. Meena Rustgi (716) 632 5768

rustgime@roadrunner.com

California: Mrs. Nirmala Shukla (510) 770 1218

nirmalashukla@comcast.net

Chicago: Mr. Kamal Gupta (847) 612 4244

citkam@gmail.com

New Jersey: Mr. Sharad Agarwal (732) 283 0566

sharad@sntravel.net

New York: Mr. Man Mohan Maheshwari (212) 678 9011

m_wari@yahoo.com

Web Master

Mr. Saugata Banerjee

Email : ronbans@gmail.com

Editor Hindi Jagat & International Co-ordinator

Prof. Suresh Rituparna

221 Prabhavi Apartments, Plot No. 29B,

Sector 10, Dwarka, New Delhi 110075

Tel: 91 11 4558 4374, Mob.: 91 98104 53245

Email: rituparna.suresh@gmail.com

विश्व हिन्दी न्यास की परिकल्पना (Vision)

1. एक ऐसा विश्व जहाँ हिन्दी एक महत्वपूर्ण वैश्विक-भाषा के रूप में विकसित हो।
2. एक ऐसी कार्य साधक भाषा बनाने का प्रयास जिसका प्रयोग सरकारी एवं निजी संस्थानों के अतिरिक्त संयुक्त राष्ट्र संघ में भी हो सके।

विश्व हिन्दी न्यास का उद्देश्य (Mission)

1. हिन्दी भाषा के प्रति वैश्विक जागृति लाने का प्रयास
2. ज्ञान की विभिन्न शाखाओं में इसके प्रयोग का विस्तार
3. हिन्दी भाषी समुदायों के बीच संस्कृति जन्य ज्ञान पर आधारित मूल्य बोध एवं शिक्षाओं का प्रचार-प्रसार

विश्व हिन्दी न्यास का लक्ष्य (Goals)

1. न्यास का प्रयास रहेगा कि वह ऐसे व्यक्तियों एवं संस्थाओं को अपना समर्थन और प्रोत्साहन दे जो हिन्दी भाषा के शिक्षण एवं प्रयोग के क्षेत्र में जागृति फैलाने के कार्य से जुड़ी हुई हैं।
2. दक्षिण एशियाई विद्वानों, लेखकों, कलाकारों एवं विशेषज्ञों के सहयोग से विशिष्ट परियोजनाओं का सूत्रपात करना।
3. एक ऐसे अन्तर्जातिलक आभासी मंच का निर्माण करना जिस पर 'ऑनलाइन सेटिंग' के माध्यम से भारतीय सामुदायिक केन्द्रों एवं शिक्षण संस्थाओं तक हिन्दी-शिक्षण-कार्यक्रमों को पहुँचाया जा सके।

न्यास की सदस्यता

विश्व हिन्दी न्यास के उद्देश्य और लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए हमें अनेक सक्रिय सदस्यों की आवश्यकता है। हमारा प्रयास है कि जो भी व्यक्ति न्यास के उद्देश्य, लक्ष्य एवं प्रेरक कार्यों में रुचि रखता है, न्यास का सदस्य बनने के लिए उसका हम सहर्ष स्वागत करते हैं। न्यास का सदस्य बनने के लिए तीन श्रेणियाँ हैं--

- | | |
|----------------------------|------------------------------|
| 1. आजीवन सदस्य | (सदस्यता राशि - \$400 मात्र) |
| 2. वार्षिक पारिवारिक सदस्य | (सदस्यता राशि - \$ 40 मात्र) |
| 3. व्यक्ति सदस्य | (सदस्यता राशि - \$25 मात्र) |
| 4. छात्र सदस्य | (सदस्यता राशि - \$ 10 मात्र) |

अनुदानदाता सदस्यों के लिए पाँच श्रेणियाँ हैं:-

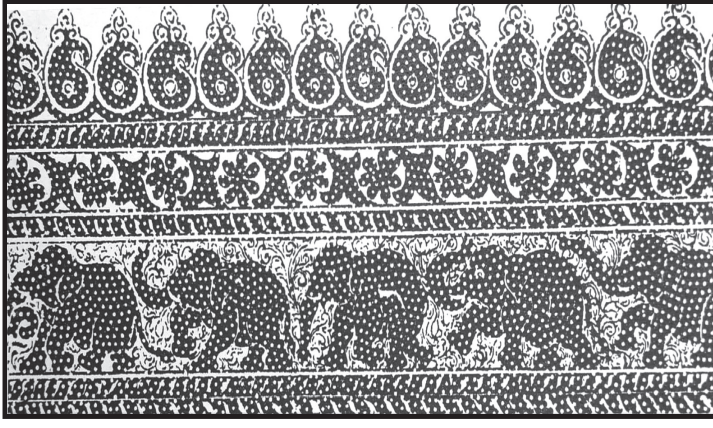
- | | |
|---------------------|---------------------------|
| 1. हिन्दी रत्न | - \$20,000 अथवा इससे अधिक |
| 2. हिन्दी संरक्षक | - \$10,000 अथवा इससे अधिक |
| 3. हिन्दी हितकारी | - \$5,000 अथवा इससे अधिक |
| 4. हिन्दी मित्र | - \$3,500 अथवा इससे अधिक |
| 5. हिन्दी शुभचिन्तक | - \$2500 अथवा इससे अधिक |

आप किसी भी श्रेणी का चुनाव कर सकते हैं और अनुदान का चैक कोषाध्यक्ष (Treasurer) श्री प्रदीप अग्रवाल को निम्न- लिखित पते पर भेजने की कृपा करें।

25, Oak Tavern Circle, Branchburg, NJ 08876 USA

Tel: (646) 472-6320 Email: pnagarwal@gmail.com

न्यास की वेबसाइट पर जाकर सदस्यता फॉर्म



हिन्दी जगत

ISSN 1543-8651 (USA)

अप्रैल-जून 2026 • वर्ष : 27 अंक : 2

सम्पादक मंडल

प्रबंध सम्पादक

डॉ. अंचला सोब्रिन

àßmail : hindinyas@gmail.com, Tel : +1(845) 226-2542

सम्पादक

प्रो. सुरेश ऋतुपर्ण

àßmail: rituparna.suresh@gmail.com, Tel : 91-9810453245

•

सह-सम्पादक

इला प्रसाद

Email : ila_prasad1@yahoo.com, Tel : +1(832) 446-3677

निवेदन : कृपया प्रकाशन हेतु अपनी रचनाएँ सम्पादक मंडल के पास भेजें।
पत्रिका में व्यक्त विचार स्वतन्त्र रूप से लेखकों के हैं, न्यास का उनसे
सहमत होना आवश्यक नहीं है तथा प्रकाशित रचनाओं के लिए हम
किसी प्रकार का मानदेय देने में असमर्थ हैं।
इस अंक में प्रकाशित रचनाओं के लेखकों के प्रति हम अत्यन्त आभारी हैं।

विश्व हिन्दी न्यास,

World Hindi Foundation

20 Presidential Way Hopewell Junction,

New York, 12533

के लिए

डॉ. सुरेश ऋतुपर्ण, अन्तर्राष्ट्रीय समन्वय-संयोजक द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

मुद्रक : विकास कम्प्यूटर एंड प्रिंटर्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

अनुक्रम

आपके पत्रों से	2
सम्पादकीय	3
पाँच कविताएँ	— पवन शर्मा 4
हजारी प्रसाद द्विवेदी और शान्ति निकेतन	— गौरव पांडे 5
नदी की स्मृतियों में	— पुष्पिता अवस्थी 7
आशा भोसले की बात ही कुछ और थी	— प्रदीप सरदाना 8
आशा भोसले :	
एक निरंतर संघर्ष और संभावना	— दिनेश लखनपाल 10
चार कविताएँ	— हरदीप सबरवाल 12
ईशू, यह दुनिया ऐसी क्यों है? (कहानी)	— अरुण अर्णव खरे 13
तीन कविताएँ	— रमेश कुमार सोनी 17
जाना था जापान पहुँच गए चीन (संस्मरण)	— गोविन्द माथुर 18
उपेक्षा (लघुकथा)	— प्रिया देवांगन 'प्रियू' 19
तीन कविताएँ	— उपेन्द्र कुमार 20
अदर मदर (कहानी)	— डॉ. शैलजा सक्सेना 21
दो कविताएँ	— डॉ. यशोधरा भटनागर 29
कान (कहानी)	— हंसा दीप 30
हिन्दी लेखकों की दुनिया के	
लेखकों में कमजोर उपस्थिति क्यों है?	— प्रो. शंभुनाथ 33
लेखक की नियति : कुछ दोहे	— जय चक्रवर्ती 33
मेरी कुछ काव्य-पंक्तियाँ	— लावण्या शाह 34
एक कजूस की मौत (कहानी)	— वंदना त्रिपाठी 35
अनहोनी	— मनोज धीमान 37
पाँच कविताएँ	— केशव शरण 37
चार कविताएँ	— सुशांत सुप्रिय 38
भूटान यात्रा : एलिस इन वंडरलैंड!	— विजया सती 39
डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम :	
ऐसा उम्मीदवार ढूँढ़ते रह जाओगे	— प्रकाश दुबे 41
गुलमोहर का पेड़ (कहानी)	— शीला मिश्रा 42
एक दिन	— सपना भट्ट 43
वैश्विक हिन्दी के पुरोधा : श्याम त्रिपाठी—	डॉ. शैलजा सक्सेना 44
चार कविताएँ	— डॉ. अंजना अनिल 45
तोंद के घेरे में अमेरिकन सपना (व्यंग्य)—	धर्मपाल महेंद्र जैन 46
दो गजलें	— अशोक सिंह 46
अपने-अपने घर	— जसवीर त्यागी 47
दो गजले	— रमेशचंद्र पंत 47
एक दोपहर, एक शाम, सिर्फ हिन्दी के नाम	— इला प्रसाद 48

आवरण चित्र : सुरेश ऋतुपर्ण

हिन्दी जगत का जुलाई-दिसंबर अंक देख रही थी। दरअसल बहुत पत्रिकाएं आती हैं तो धीरे-धीरे ही पढ़ने में आता है। कवितांश और छायांकन में अंतिम पृष्ठ पर आपका नाम देखा। शब्द तो खूबसूरत हैं ही, आपने जो तस्वीर ली, वह भी बेहद खूबसूरत है।

कहां की है पता नहीं, लेकिन बहुत सुंदर है।

आपको साधुवाद।

शीला मिश्रा की एक कहानी भी बहुत अच्छी लगी। उन्हें भी मैसेज कर रही है।

— ज्योति जैन
इन्दौर

आशा है स्वस्थ एवं सानन्द होंगे। 'हिन्दी जगत' के अंक निरन्तर मिल रहे हैं। प्रत्येक अंक में अच्छी पठनीय सामग्री प्रकाशित हो रही है। जुलाई-दिसम्बर 2025 के अंक में आपका सम्पादकीय एवं जन्म शताब्दी के अवसर पर प्रकाशित लब्ध प्रतिष्ठित गीतकार गोपाल दास 'नीरज' पर आलेख महत्वपूर्ण हैं। 'दूरदर्शन' पर प्रकाशित आलेख ने स्वर्णयुग की स्मृति ताजा कर दी।

— गोविन्द माथुर
गुरुग्राम (हरियाणा)

हिन्दी जगत का जनवरी-मार्च 2026 का अंक मिला, धन्यवाद। हमेशा की तरह यह अंक भी विविध साहित्यिक विधाओं से ओत-प्रोत लगा। 'झूठ को सच बनाने की साजिश और चित्रकला' अशोक भौमिक का विचारोत्तेजक लेख है। लेखक ने चित्रकला के माध्यम से इतिहास और सत्ता के संबंधों को जिस प्रामाणिकता और गहनता के साथ प्रस्तुत किया है वह पाठक को इतिहास के दूसरे पक्ष पर विचार करने के लिए प्रेरित करता है।

इसी प्रकार 'श्यामल बिहारी महतो की कहानी 'एक भिखारी की कथा' मन की गहराई तक स्पर्श करती है। कहानी में सामाजिक



आपके पत्रों से

विशमता और बदलते पारिवारिक मूल्यों का अत्यंत सजीव चित्रण किया गया है। लेखक की सहज भाषा और संवाद पाठक को कहानी के अंत तक बाँधे रखते हैं। केशव 'चरण' की 'पाँच कविताएँ' भी उल्लेखनीय हैं। विशेषकर 'मजबूर पतंगें' और 'उड़ता पंछी' जीवन की गहराई को सरल 'शब्दों' में व्यक्त करती हैं। कुल मिलाकर यह अंक साहित्य, समाज और संवेदना का खूबसूरत मिलन है। संपादक मंडल व सभी रचनाकार बधाई के पात्र हैं।

— सुधा गुप्ता
जनकपुरी, दिल्ली

रंजना जायसवाल की कहानी 'स्टैच्यू', जो हिन्दी जगत पत्रिका में प्रकाशित है, मानवीय संवेदनाओं, स्वाभिमान और सामाजिक उत्तरदायित्व का अत्यंत मार्मिक चित्रण प्रस्तुत करती है। 'हिन्दी जगत' जैसी साहित्यिक पत्रिका समकालीन समाज की ज्वलंत समस्याओं, मानवीय मूल्यों और सामाजिक यथार्थ को पाठकों तक पहुंचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इस पत्रिका में प्रकाशित रचनाएं केवल साहित्यिक आनंद ही नहीं देतीं, बल्कि पाठकों को सामाजिक सरोकारों के प्रति जागरूक और संवेदनशील भी बनाती हैं।

'स्टैच्यू' कहानी हमें सिखाती है कि समाज दूसरों की गरीबी और पीड़ा को केवल तमाशे की दृष्टि से न देखे, बल्कि उनके प्रति सहानुभूति, सहयोग और संवेदनशीलता का भाव रखे। कहानी का प्रमुख पात्र 'ददा' यह सिद्ध करते हैं कि विपरीत परिस्थितियों में भी आत्मसम्मान बनाए रखते हुए श्रम के बल पर जीवन जीना ही सच्ची गरिमा है। साथ ही, यह रचना इस सत्य को भी दर्शाती करती है कि जीवन के अंतिम पड़ाव में बुजुर्गों को दया नहीं, बल्कि सम्मान और भावनात्मक सहारा चाहिए। 'हिन्दी जगत' पत्रिका में प्रकाशित

कहानियां अपने प्रभावशाली कथ्य और सशक्त संदेश के कारण पाठकों के मन पर गहरी छाप छोड़ती हैं तथा साहित्य की सामाजिक उपयोगिता को सार्थक सिद्ध करती हैं।

प्रस्तुत अंक में प्रकाशित अभूतपूर्व साहित्यिक-सामाग्री के लिए हार्दिक धन्यवाद।
— शुभांगी त्रिपाठी
कृष्ण कुंजमाला, दिल्ली

'हिन्दी जगत' का नया अंक जनवरी-मार्च 2026 पाकर अत्यंत प्रसन्नता हुई। इस अंक की प्रत्येक रचना अपनी भाषा और प्रस्तुति के कारण पाठकों का ध्यान आकर्षित करती है। विशेष रूप से प्रेम जनमेजय की व्यंग्य-रचना 'एक इलेक्ट्रॉनिक होली' आधुनिक जीवन की व्यस्तता, तकनीक पर बढ़ती निर्भरता और रिश्तों में आती कृत्रिमता का अत्यंत रोचक चित्र प्रस्तुत करती है। व्यंग्य के माध्यम से लेखक ने गंभीर सामाजिक यथार्थ को सहजता से प्रस्तुत किया है। हर भगवान चावला की लघुकथा 'बिजूके' ने धार्मिक सद्भाव का अत्यंत महत्वपूर्ण संदेश दिया है। कथानक सरल होते हुए भी गहरी संवेदना से पूर्ण है तथा अंत में पाठक को आत्ममंथन के लिए मजबूर कर देता है। इसी प्रकार सुदर्शन रत्नाकर की 'शुद्ध जात' सामाजिक भेदभाव और जातिगत पूर्वाग्रहों पर सशक्त टिप्पणी करती है। कथा का अंतिम वाक्य- 'कोनो बात नहीं बहू, जब अपने सेवा न कर सकें तो परायों की कौन जात, जो सेवा करे वह 'शुद्ध जात।' -मन को गहराई तक छूता है।

आखिर में, अंतिम पृष्ठ पर प्रकाशित कविता के 'शब्द एवं चित्र मन की गहराई तक उतर जाते हैं। सभी रचनाकारों को इस उत्कृष्ट प्रस्तुति के लिए हार्दिक बधाई और संपादक मंडल को आगामी अंकों के लिए 'शुभकामनाएँ'।

— पूनम श्रीवास्तव
फरीदाबाद (हरियाणा)

इस अंक में हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक और विचारक शंभुनाथ जी की एक विचारणीय टिप्पणी प्रकाशित की जा रही है। उन्होंने हिन्दी लेखक समाज के सामने एक प्रश्न उपस्थित किया है कि इधर के अनेक वर्षों में दुनिया के लेखकों में हिन्दी लेखकों की उपस्थिति कमजोर क्यों है? विभिन्न प्रकार के पुरस्कारों से लदे लेखकों के पाठकों की संख्या कितनी है? उनकी पुस्तकों की कितनी प्रतियाँ बिक पाती हैं? कई बार तो ऐसा भी देखने में आता रहा है कि कुछ पुस्तकों का सीमित संख्या में प्रकाशन इसी उम्मीद के साथ किया जाता है कि इसे किसी-न-किसी पुरस्कार के लिए प्रस्तावित किया जा सके। इसी के साथ शुरू होता है जोड़-तोड़ और सिफारिशों का दौर। विभिन्न पुरस्कार समितियों के सदस्य जब भी किसी निर्णायक समिति में भाग लेने पहुँचते हैं तो उनकी जेब में अपने निर्णय चहेते लेखकों के नाम होते हैं।

सबसे आसान तरीका यही रहता है कि कोई जाना-पहचाना या चर्चित नाम उठा लो और किसी भी एक कृति, जो नियमों के अनुसार योग्य लगती है, उसका चयन कर लिया जाए। यह सब एक प्रक्रिया के तहत होता है। निर्णायकों के मन में कोई नैतिक उत्तरदायित्व का भाव नहीं जागता है।

इस संदर्भ में एक और बात ध्यान देने योग्य है कि जो लोग निर्णायक मंडल में होते हैं, वे उससे बाहर स्वयं लेखक-साहित्यकार होने के नाते, अन्य अनेक तरह के पुरस्कारों के प्रत्याशी भी होते हैं। तो उनकी यह आकांक्षा, उन्हें प्रस्तुत करने की होती है कि जो कालान्तर में उनके हितों का भी ध्यान रखें। यह एक प्रकार का सौजन्यपूर्ण आदान-प्रदान होता है।

बहुत बार यह भी देखने में आता है कि इन पुरस्कारों की समितियों के सदस्यों के चयन हेतु जब कुछ बड़े और प्रतिष्ठित नामों

सम्पादकीय

को प्रस्तावित किया जाता है तो वे यह कहकर समिति में आने से मना कर देते हैं कि यदि वे इस समिति के सदस्य बन गए तो फिर इस पुरस्कार के लिए उनका नाम चयन-प्रक्रिया से बाहर हो जाएगा।

एक बात और ध्यान देने की है। हिन्दी भाषा से जुड़े अनेक पुरस्कार कृति-आधारित हैं। लेकिन देखने में यही आता है कि कृति से अधिक उस लेखक का प्रभाव मंडल ही महत्वपूर्ण समझा जाता है ताकि किसी भी प्रकार की आलोचना न हो। इस संदर्भ में वर्ष 1972 में भवानी प्रसाद मिश्र को उनकी कृति 'बुनी हुई रस्सी' पर साहित्य अकादमी पुरस्कार अर्पण समारोह में दिया गया तब उन्होंने कहा कि जब उन्हें कई बार हृदय रोग के झटके लग गये तो साहित्य अकादमी ने सोचा कि अब उन्हें यह पुरस्कार दे दिया जाना चाहिए। पता नहीं कब भवानी प्रसाद सिधार जाएँ। और मेरी एक कमजोर कृति 'बुनी हुई रस्सी' को पुरस्कार योग्य समझ लिया गया। वस्तुतः यह पुरस्कार मेरी वृत्ति को नहीं "मुझे मिला है।"

भवानी प्रसाद मिश्र की यह बात बहुत हद तक सही है। होता यही है कि एक लेखक निरंतर लिखता रहता है। उसकी प्रारम्भिक कृतियों की श्रेष्ठता उसे समादृत बना देती है। लेकिन यह तो जरूरी नहीं है कि उसकी प्रत्येक कृति उतनी ही श्रेष्ठ हो। लेकिन पुरस्कारकर्ताओं को एक समय सीमा में उपलब्ध कृति को ही पुरस्कृत करना होता है, न कि समग्र जीवन साहित्य को तो जो भी कृति समयावधि में प्रकाशित होती है, उसे पुरस्कृत कर दिया जाता है। ज्ञानपीठ पुरस्कार में ऐसे उदाहरण मिलते हैं। महादेवी वर्मा को उनकी कृति 'यामा' के लिए पुरस्कृत किया गया था, जबकि यह कृति काफी पहले प्रकाशित हुई थी।

वस्तुतः इस समस्या का कोई तार्किक निदान नहीं हो सकता और शायद इसकी कोई जरूरत भी नहीं है। यदि पुरस्कार देने वाला और लेने वाला प्रसन्न हैं तो इस पर किसी भी प्रकार की चर्चा बेमानी है। कुकुरमुत्तों की तरह उग आई अनेक स्वयंभू संस्थाएँ अपने अस्तित्व और प्रभुत्व के लिए पुरस्कार बाँटने का 'धंधा' भी करने लगी हैं। ऐसी स्थिति में कोई विचारवान व्यक्ति क्या कर सकता है। आज लेखक बनकर यश-प्राप्ति की चाहना प्रमुख हो गई है, न कि अपनी कलम की शक्ति से मनुष्यमात्र की नियति, उसका संघर्ष, उसकी वेदना को किसी भी प्रकार के बाहरी अथवा प्रत्यक्ष दबाव के बिना लिखना।

इसका एक कारण हमारे समय की परिस्थितियाँ भी हैं। एक समय था जब हिन्दी के अनेक लेखक, लेखन से ही अपना जीवन चलाते थे। लेखक की कृतियाँ जो प्रकाशक छापते थे तो उसके एवज में वे लेखकों को जीवन-यापन के लिए पर्याप्त रॉयल्टी भी देते थे। लेकिन आज ऐसे अनेक प्रकाशक हैं जो लेखक को कुछ नहीं देते, उसके धन भी लेते हैं और उसे लेखक बना दिये जाने का अहसान भी जताते हैं।

जितना पुस्तक प्रकाशन आसान होता गया, लेखकों की संख्या बढ़ने लगी लेकिन लेखन की गुणवत्ता कम होती गई। अब ऐसी कृतियाँ चुनी हैं जिन्हें आप पढ़ना शुरू करें तो समाप्त करके ही उठें। उनमें 'रीडेबिलिटी' का गुण कम होता जा रहा है। भाषा में सहजता, सरलता के स्थान पर शब्दों की बाजीगरी बढ़ती जा रही है। ऐसी परिस्थितियों में कालजयी साहित्य की रचना निश्चय ही एक बड़ी चुनौती है।



बारिश के बाद

बारिश के बाद
पेड़ों ने जैसे
अपने भीतर छिपी थकान उतार दी
पत्तियों पर ठहरी हुई बूँदें
किसी अधूरे पत्र के
बचे हुए शब्द लगती हैं
मिट्टी की गंध
हर बार यह विश्वास दिलाती है
कि जीवन
सबसे कठिन मौसम के बाद भी
फिर से अंकुरित हो सकता है
हम भी शायद इसी धरती की तरह हैं
बार-बार भीगते
बार-बार टूटते और फिर
किसी छोटी-सी धूप के सहारे
मुस्कुराना सीख लेते हैं।

माँ के हाथ

माँ के हाथों में
सिर्फ रेखाएँ नहीं थीं
पूरा एक घर बसता था
वे आटा गूंधते हुए
चिंताओं को भी मुलायम कर देती थीं
रोटियों की गोलाई में
उन्होंने कभी अपना सपना नहीं माँगा
बस हमारी भूख का आकार देखा
आज उन हाथों पर झुर्रियाँ हैं
पर उनका स्पर्श
अब भी उतना ही उजला है
जितनी सुबह की पहली किरण
समय बहुत कुछ बदल देता है
लेकिन माँ के हाथ
हर उम्र में
आशीर्वाद की सबसे सच्ची भाषा
बने रहते हैं।

पाँच कविताएँ □ पवन शर्मा

शहर में बची हुई नदी

शहर ने
नदी को नक्शों में छोड़ दिया है
किनारों पर
अब इमारतें उगती हैं
और लहरों की जगह
वाहनों का शोर बहता है
फिर भी
किसी बच्चे की हँसी में
किसी बूढ़े की स्मृति में
किसी कवि की आँखों में
वह नदी अब भी बहती है
नदियाँ
सिर्फ पानी नहीं होतीं
वे मनुष्य की करुणा
उसकी स्मृति
और उसके भविष्य की प्यास होती हैं
जिस दिन
हम अंतिम नदी खो देंगे
शायद उसी दिन
अपने भीतर का सबसे निर्मल मनुष्य भी।

खिड़की

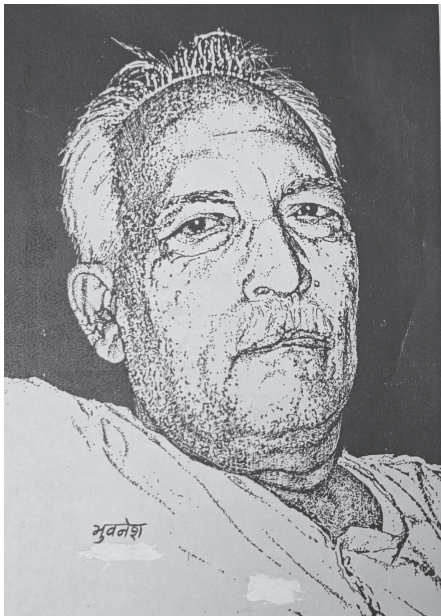
हर घर में
एक खिड़की होती है
जो सिर्फ हवा के लिए नहीं
उम्मीद के लिए खुलती है
वहीं से सुबह का पहला पक्षी
अपना गीत भेजता है
वहीं से धूप का एक टुकड़ा
चुपचाप फर्श पर उतरता है
कभी-कभी
हम खिड़कियाँ बंद कर लेते हैं
यह सोचकर
कि बाहर बहुत शोर है
पर उसी शोर के बीच

कहीं कोई बच्चा हँस रहा होता है
कोई पेड़
नई पत्तियों से भर रहा होता है
कोई बादल
सूखी धरती की ओर बढ़ रहा होता है
जीवन दरवाज़ों से कम
खिड़कियों से अधिक लौटता है
जहाँ से दुनिया भीतर आती है
और मन अपने भीतर की कैद से
धीरे-धीरे मुक्त होने लगता है।

आखिरी चिड़िया

शाम उतर रही थी
आकाश अपने रंग समेट रहा था
और तभी एक अकेली चिड़िया
दूर क्षितिज की ओर उड़ती दिखाई दी
उसकी उड़ान में
कोई जल्दबाज़ी नहीं थी
जैसे उसे भरोसा हो
कि हर लौटना
किसी घर तक पहुँचता है
मैं देर तक उसे देखता रहा
सोचा मनुष्य भी
दिन भर की भागदौड़ के बाद
किसी ऐसे ही अदृश्य
घोंसले की तलाश में रहता है
जहाँ उसे अपने नाम से पहले
अपनापन मिले
शायद घर ईंटों और छतों से नहीं बनता
वह बनता है उन आवाज़ों से
जो तुम्हारे लौटने पर कहती हैं -
'आ गए?'
और यह छोटा-सा प्रश्न
दिन भर की सारी थकान को
धीरे से प्रेम में बदल देता है। □

विद्या भवन, वार्ड नंबर-17, सुकरी चर्च,
जुन्नारदेव, जिला- छिंदवाड़ा (मध्यप्रदेश)
मोबाइल: 9425837079/8319714936
ईमेल : pawansharma7079@gmail.com



हजारी प्रसाद द्विवेदी और शान्ति निकेतन

□ गौरव पांडे

प्रसाद मिश्र ने द्विवेदी जी की प्रशंसा में लिखे थे और काम देने की सिफारिश की थी।

23 अक्टूबर, 1973 को शिवमंगल सिंह 'सुमन' के नाम लिखे पत्र में द्विवेदी जी कहते हैं "आप जानते ही हैं 6, 7, और 8 नवंबर मेरे 'द्विजत्व प्राप्ति' की तिथि है। मैं शान्तिनिकेतन 6 को चला था, 7 को पहुँचा और 8 को काम शुरू किया था। इन तिथियों को मैं बहुत महत्वपूर्ण मानता हूँ।"

द्विवेदी जी रवीन्द्रनाथ ठाकुर से बहुत प्रभावित थे। 19 सितंबर 1945 को पंडित बनारसीदास चतुर्वेदी के नाम लिखे पत्र में वे लिखते हैं : "जीवन में 'टर्निंग प्वाइंट' की बात आपने पूछी है। मेरे जीवन की सबसे बड़ी घटना शान्तिनिकेतन में गुरुदेव के दर्शन पाना है" इसी पत्र में आगे लिखते हैं "रवीन्द्रनाथ को देखने का जिस दिन मुझे अवसर मिला वह दिन मेरे अनेक जन्म के पुण्यों का फल था। मैंने बिल्कुल नई दृष्टि और नया विश्वास पाया।"

वे रवीन्द्रनाथ ठाकुर से इतने प्रभावित थे कि उन्होंने दाढ़ी बढ़ा ली थी। एक दिन गुरुदेव ने मज़ाक में कहा "तुम मेरे प्रतिद्वंद्वी बनना चाहते हो- यह नहीं होगा।" उसके बाद द्विवेदी जी ने दाढ़ी कटवा ली थी।

शान्तिनिकेतन ने द्विवेदी जी को परंपरा की दूसरी धारा से परिचित कराया—एक ऐसी धारा जो केवल ब्राह्मणवादी शास्त्र-परंपरा तक सीमित नहीं थी बल्कि लोक, संत और मानवतावादी चेतना से जुड़ी थी। इस बात का अंदाज़ा इस उदाहरण से लगाया जा सकता है :

"शान्तिनिकेतन में एक विधवा अपनी कन्या का विवाह हिन्दू विधि से करना चाहती थी। किसी ने कह दिया कि नान्दी-श्राद्ध विधवा नहीं कर सकती। गुरुदेव ने द्विवेदी जी को बुलाया। पूछा, "हिन्दुओं का हजारों वर्ष का इतिहास है, क्या उसमें पहली बार यह घटना हो रही है? पहले भी तो कभी ऐसी स्थिति आई होगी?" पंडितजी घर आए। स्मृति-ग्रंथों की छानबीन की। देखा कि पूर्वपक्ष में ऐसे बहुत से वचन हैं। जो विधवा के इस अधिकार को स्वीकार करते हैं। लेकिन वचनों की संगति लगाते समय निष्कर्ष रूप में यही कहा गया है कि विधवा को ऐसा अधिकार नहीं है। जाकर गुरुदेव को बताया तो हँसकर बोले, "क्या गुरुदेव को बताया तो हँसकर बोले, "क्या पूर्वपक्ष के वे ऋषि कुछ कम पूज्य हैं, जिनका खंडन उत्तरपक्ष में किया गया है?" इस प्रश्न ने पंडितजी को झकझोर दिया। परम्परा क्या उत्तरपक्ष ही है? पूर्वपक्ष नहीं? एक तरह से यह इतिहास-बोध का उदय था।

यहाँ से उनके भीतर एक परिवर्तन शुरू होता है— शास्त्र से जीवन की ओर। ग्रंथ से मनुष्य की ओर। द्विवेदी जी ने हिन्दी साहित्य में जिस 'दूसरी परंपरा' की पहचान की, उसका बौद्धिक बीजारोपण शान्तिनिकेतन के वृक्षों की छाया तले ही हुआ था।

यह दूसरी परंपरा क्या है? यह संत साहित्य की परंपरा है—कबीर, नानक, दादू की धारा। यह लोक-संस्कृति और जन-चेतना की परंपरा है। यह मानव-केन्द्रित आध्यात्मिकता की परंपरा है।

शास्त्र की पहली परंपरा जहाँ विधि, कर्मकांड और संरचना पर बल देती है, वहीं दूसरी परंपरा अनुभव, संवेदना और समता पर आधारित है। शान्तिनिकेतन में रहते हुए द्विवेदी जी ने

'शान्ति निकेतन' यह शब्द सुनने में ही कितना सुकून भरा है जैसे कोई सपनों की जगह। रवीन्द्रनाथ ठाकुर के सपनों का—विश्वनीड-शान्ति निकेतन। जहाँ शिक्षा प्रकृति, कला, लोक और विश्व-संवाद के साथ जुड़ी थी। जिसका आदर्श था—"यत्र विश्वं भवत्येकनीडम्" अर्थात् जहाँ सारा संसार एक घोंसले के समान हो जाता है। मूल शान्तिनिकेतन वृक्षों की छाया में ही रचा बसा था। यह केवल एक परिसर नहीं बल्कि सांस्कृतिक प्रयोग-भूमि था। आगे चलकर यही परिसर विश्व-भारती विश्वविद्यालय के रूप में विकसित हुआ,

जब 1930 में द्विवेदी जी शान्ति निकेतन पहुँचे, तब वे अपने साथ शास्त्रीय अनुशासन लेकर आए। लेकिन यहाँ उन्हें एक ऐसा वातावरण मिला, जहाँ— शिक्षा प्रकृति के बीच होती थी। जहाँ भारतीय परंपरा का सम्मान था, लेकिन संकीर्णता नहीं थी। विश्व-संस्कृतियों का संवाद था पर आत्महीनता नहीं थी।

द्विवेदी जी को यह नौकरी अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध, पंडित मदन मोहन मालवीय और आचार्य केशव प्रसाद मिश्र की सिफारिश पर मिली थी। जब वह शान्तिनिकेतन पहुँचे थे तो उनके पास रवीन्द्रनाथ ठाकुर के नाम पत्र थे जिन्हें मदन मोहन मालवीय और आचार्य केशव

मध्यकालीन भक्ति साहित्य का गंभीर अध्ययन किया। उन्होंने कबीर, सूर, नाथपंथ और संत परंपरा को नए परिप्रेक्ष्य में देखा। द्विवेदी जी ने कबीर पर जो महत्वपूर्ण कार्य किया, उसमें कबीर को केवल धार्मिक संत नहीं, बल्कि सांस्कृतिक क्रांतिकारी के रूप में प्रस्तुत किया जो भारतीय समाज की जड़ताओं को तोड़ते हैं। द्विवेदी जी के इस महत्व को स्वीकार करते हुए अशोक बाजपेयी अपने (1979 में) “प्राचीनों से गप लगाता आधुनिक” नामक आलेख में लिखते हैं कि “पिछले तीस वर्षों में कबीर और अन्य संत कवियों के संघर्ष, सामाजिक चेतना, बिद्रोह शीलता, मानवतावाद आदि की जो पहचान बनी है उसका बहुत बड़ा श्रेय द्विवेदी जी को है।” इसी आलेख में द्विवेदी जी को “सच्चा आधुनिक” कहा गया है क्योंकि आधुनिक मनुष्य का संशय, उसकी जिजीविषा, उसकी अस्मिता और संघर्ष, उसके दुःस्वप्न और आदर्श उनके निबंधों और उपन्यासों की विशेषता और विषयवस्तु रही है। अशोक जी की इस बात से हम आज भी सहमत हैं। निश्चित ही यह आधुनिक दृष्टि द्विवेदी जी को शांति निकेतन के मुक्त वातावरण में मिली जहाँ प्रश्न पूछने और परम्परा को नए सिरे से समझने की स्वतंत्रता थी।

शांति निकेतन ने द्विवेदी जी को केवल सांस्कृतिक विस्तार नहीं दिया, बल्कि एक मानवीय दृष्टि भी दी। ‘मनुष्य की जय यात्रा’ तो द्विवेदी का तकियाकलाम ही है जो उन्हें रवींद्रनाथ से मिला था।

द्विवेदी जी मानते थे कि, “देवता न बड़ा होता है, न छोटा, न शक्तिशाली होता है, न अशक्त; वह उतना ही बड़ा होता है जितना बड़ा उसे उपासक बनाना चाहता है।” यह कथन मनुष्य की आस्था की सृजनात्मक शक्ति को महत्व देता है।

हम सब कहते सुनते और पढ़ते आ रहे हैं कि द्विवेदी जी की रचनाओं में मनुष्य ही केंद्र में है। “मनुष्य ही साहित्य का लक्ष्य है।” यह निबंध तो हमने एम.ए. के पाठ्यक्रम में पढ़ा था। द्विवेदी जी पर बात करते हुए मेरे गुरु प्रो. चित्ररंजन मिश्र जी ने बातचीत में कहा था कि “द्विवेदी जी मनुष्य की अपराजेय जिजीविषा में विश्वास और आत्मतत्त्व को बहुत महत्व देने वाले रचनाकार हैं। और सच्चे अर्थों में भारतीय साहित्य के गंभीर अध्येता हैं जिनकी जड़ें भारतीय लोक से जीवन रस और कल्पना ग्रहण करती हैं।” इस बात को हम द्विवेदी जी के निबंधों और उपन्यासों को पढ़ते हुए महसूस करते हैं।

द्विवेदी जी ने अपने लेखन में मुख्यधारा से अलग पड़े विषयों पर विशेष ध्यान दिया है। जिनको वो सम्मान नहीं मिला जिनके हकदार वे हैं उन पर अपनी बात कही है। ‘अशोक का फूल’ उपेक्षित है, ‘कुटज’ उपेक्षित है; कबीर उनके पूर्व हिन्दी में उपेक्षित थे। नाथ-सिद्धों की रचनाओं को गैर साहित्यिक मानकर उन्हें अन्तःसाधनात्मक माना जाता था।

द्विवेदी जी के उपन्यासों में प्रमुख नारी-पात्रों यानी नायिकाओं से अधिक प्रभाव सहचरियों का पड़ता है। भट्टिनी से अधिक निउनिया का और मृणाल से अधिक चन्द्रा का। भट्टिनी और मृणाल तो ठेठ शान्तिनिकेतनी पात्र हैं। तो निउनिया और चन्द्रा ठेठ पूर्वी उत्तर प्रदेश की दलित पात्र हैं।

द्विवेदी जी ने शांतिनिकेतन में ‘हिन्दी भवन’ की संकल्पना को साकार किया। वह वहाँ हिन्दी के प्रवक्ता की तरह नहीं हिन्दी लेखक और कार्यकर्ता की तरह रहे। उन्होंने 1938 में बनारसीदास चतुर्वेदी को लिखे पत्र में अपना मंतव्य प्रकट किया है “इस समय शांतिनिकेतन में 77 विद्यार्थी हिन्दी शिक्षण पर हैं। 30 सदस्य हिन्दी समाज में हैं। 6 बंगाली अध्यापक हिन्दी में विचार प्रकट करने की चेष्टा करते हैं। यह सब कुछ करते समय मैंने सदा अपनी नीति चुप रहने



की रखी है। प्रचार प्रसार कहते रहने से काम खराब होता है” निश्चित ही यह द्विवेदी जी ने चुपचाप ही किया। हिन्दी का पहला समाचार पत्र ‘उदंत मार्तण्ड’ यहीं से निकला था।

द्विवेदी जी सरलता और आमफहम के नाम पर बाजारू भाषा को राजभाषा बनाये जाने का विरोध भी करते हैं। उनका कहना था “मेरे लिए हिन्दी भाषा और हिन्दी साहित्य कोई देव प्रतिमा नहीं है जिसका नाम जपकर और आरती उतारकर हम संतुष्ट हो जाएँ। यदि हिन्दी अपना दायित्व नहीं निभाती है तो वह श्रद्धा और भक्ति का विषय नहीं बन सकती है।” द्विवेदी जी हिन्दी का महत्त्व इस बात में देखते हैं कि वह एक बड़ी जनसंख्या के जीवन स्तर, बौद्धिक स्तर और आध्यात्मिक स्तर को ऊपर उठाने का साधन बने। द्विवेदी जी के रहते ‘हिन्दी भवन’ में अनेक हिन्दी लेखकों का आना जाना था। बनारसीदास चतुर्वेदी, राहुल सांकृत्यायन, जैनेन्द्र, यशपाल, चन्द्रगुप्त विद्यालंकार आदि वहाँ ठहरते थे। अज्ञेय, बलराज साहनी, राम सिंह तोमर, राजपूताने तिवारी, मोहनलाल बाजपेयी जैसे लोग किसी न किसी रूप में हिन्दी भवन से जुड़े थे। रांगेय राघव, धर्मवीर भारती ने वहीं से शोध किया। महाश्वेता देवी अपने को द्विवेदी जी की शिष्या कहती थी और इन्दिरा गांधी भी कहती थीं।

शांतिनिकेतन से द्विवेदी जी ने विश्वभारती पत्रिका निकाली। सम्पादकीय में रवीन्द्रनाथ के हवाले से कहा गया है— “आज तो हिंदू-मुसलमानों का लज्जाजनक विद्वेष देश को आत्मघात की ओर प्रवृत्त कर रहा है। उसकी जड़ में है सारे देश में फैली अबुद्धि।” हम देख रहे हैं आज यह अबुद्धि पूरे देश में महामारी की तरह फैल चुकी है।

जब आज मनुष्य की गरिमा और स्वतंत्रता पर सबसे अधिक हमले हो रहे हैं मुझे द्विवेदी जी का यह लोकप्रिय कथन याद आता है “सत्य के लिए किसी से भी नहीं डरना, गुरु से भी नहीं, मंत्र से भी नहीं, लोक से भी नहीं, वेद से भी नहीं!” और आप देख सकते हैं आज यही चीजें सबसे अधिक डराने वाली हैं। सबसे अधिक भय इन्हीं का है। इन्हीं को आधार बनाकर नए-नए भय के तरीके ईजाद किए जा

रहे हैं। ऐसी स्थिति में द्विवेदी जी का यह कथन निश्चित ही हमें शक्ति देने वाला है।

द्विवेदी जी का निर्माण शांतिनिकेतन में हुआ। वे रवीन्द्रनाथ ठाकुर, दीनबंधु एंड्रयूज, क्षितिमोहन सेन, नंदलाल बोस, उपेन दा और रामकिंकर जैसे लोगों से प्रभावित थे और उनके आत्मीय भी थे। यहाँ रहते हुए इनका संबंध क्रांतिकारियों से भी था। भूमिगत आंदोलनकारियों की कई तरह से मदद भी किया करते थे। बाद में इन्दिरा गांधी द्वारा घोषित आपातकाल के समय भी उनके पास फ़रार और सरकार विरोधी लोगों के बहुत पत्र आते थे।

1950 की जुलाई के पास वे शांतिनिकेतन से काशी प्रायः आर्थिक एवं पारिवारिक कारणों से लौटे थे। इसके पहले भी उन्हें काशी आने का आमंत्रण मिला था लेकिन वह शांतिनिकेतन और गुरुदेव के मोह तथा काशी में अपने विरोध को देखते नहीं आए थे जबकि उन्हें मातृसंस्था में आने का बड़ा मोह था। यद्यपि इस मोह के चक्कर में उन्हें काशी से बहुत पीड़ा भी मिली।

यदि हम समग्र रूप से देखें तो शांतिनिकेतन ने द्विवेदी जी के व्यक्तित्व को तीन स्तरों पर प्रभावित किया है : (क) बौद्धिक स्तर पर उन्होंने शास्त्र को जीवन से जोड़ना सीखा। (ख) सांस्कृतिक स्तर पर उन्होंने भारतीयता को बहुलता के रूप में समझा। (ग) नैतिक स्तर पर उन्होंने संवाद, सहिष्णुता और उदारता को जीवन-मूल्य के रूप में स्वीकार किया।

निष्कर्ष यह कि शांतिनिकेतन उनके लिए केवल कार्यस्थल नहीं, बल्कि एक सांस्कृतिक पुनर्जन्म का स्थल है। हम कह सकते हैं कि यदि काशी ने उन्हें आधार दिया, तो शांतिनिकेतन ने उन्हें क्षितिज दिया। यदि काशी ने उन्हें परंपरा सिखाई, तो शांतिनिकेतन ने उन्हें परंपरा की पुनर्व्याख्या सिखाई। द्विवेदी जी का रचनात्मक व्यक्तित्व शांतिनिकेतन में परिपक्व हुआ। शांतिनिकेतन की भूमिका के बिना द्विवेदी जी को समझना अधूरा है। □

सहायक आचार्य (हिन्दी) गो. तुलसीदास राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कर्वी, चित्रकूट (उ.प्र.)
मो. 6306813815

□ पुष्पिता अवस्थी नदी की स्मृतियों में

नदी के पास अपना दर्पण है
जिसमें नदी देखती है—खुद को
आकाश के साथ

नदी के पास अपनी भाषा है
प्रवाह ही उसका उच्चार

नदी बहती और बोलती है
छूती और पकड़ती है
उझकती और छुप जाती है
कभी शिलाओं बीच
कभी अंतःसलिला बीच

नदी के पास
यादें हैं—

ऋतुओं के गंधमयी नृत्य की
नदी के पास
स्मृतियाँ हैं—

सूर्य के तपे हुए स्वर्णिम ताप की
हवाओं के क्रिस्से हैं—
परी लोक की कथाओं के

नदी के पास
तड़पती चपलता है
जिसे मछलियाँ जानती हैं

नदी के पास
सितारों के आँसू हैं
रात का गीला दुःख है
बच्चों की हँसी की सुगंध है
नाव-सी आकांक्षाएँ हैं
बच्चों सा उत्साह है

अकेले में
नदी तट पर बैठती है वह
उसकी पारदर्शी स्मृतियों में
उतरने-उतराने के लिए। □

नीदरलैण्ड + 31-630410778

आशा भोसले की बात ही कुछ और थी

□ प्रदीप सरदाना

अभी लगभग साल भर पहले की बात है, महान गायिका आशा भोसले से दिल्ली के ताज पैलेस होटल में मुलाकात हुई थी। वह एक न्यूज चैनल द्वारा आयोजित कार्यक्रम में नारी शक्ति पुरस्कार लेने आई थीं। राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मु कार्यक्रम में मुख्य अतिथि थीं। आशा जी के मंच पर जाने से पहले और कार्यक्रम के बाद भी मेरी उनसे बात हुई। लेकिन उस कार्यक्रम में, मैं यह देखकर दंग रह गया, जब राष्ट्रपति ने प्रोटोकॉल तोड़कर खुद माइक थामा और आशा जी से एक गाने की फरमाइश कर दी।

राष्ट्रपति ने फिल्म 'लगान' का गीत 'मीरा कैसे न जले' सुनने की इच्छा जताई। आशा जी ने कहा, उन्हें शब्द पूरे याद नहीं हैं। फिर भी उन्होंने इस गीत की कुछ पंक्तियाँ सुनाई तो समां बँध गया। तब राष्ट्रपति ने कहा कि आपने मेरा पसंदीदा गाना गाया, अब आप अपना कोई

पसंदीदा गाना सुनाइए। तब आशा जी ने अपना बेहद लोकप्रिय गीत गाया—“चुरा लिया है तुमने जो दिल को, नजर नहीं चुराना सनम...।”

मैं अपने परिवार के साथ उस समारोह में था। इसलिए मैं और मेरा परिवार उन खूबसूरत अविस्मरणीय पलों का साक्षी बनकर गदगद थे। उधर राष्ट्रपति भी इतनी खुश हुई कि खुद आशा जी का हाथ थामकर उन्हें मंच से नीचे छोड़ने के लिए आगे तक आई, यह भी प्रोटोकॉल से परे था।

यह वाकया दिखाता है, एक कलाकार का कद कितना बड़ा हो सकता है कि देश की राष्ट्रपति उन्हें इतना सम्मान दें।

आशा जी से कितनी ही मुलाकातें हुई। उन्हें कई बार मंच से लाइव सुना। वह अक्सर अपनी यात्रा और संघर्षों के बारे में बताती थीं, तो लगता था, बिल्कुल किसी आम घरेलू महिला की तरह ही उनके जीवन संघर्ष रहे थे और तमाम संघर्षों के बीच से उन्होंने अपने लिए कामयाबी की बेमिसाल राह बनाई।

जीवन में उतार-चढ़ाव रहे भरपूर

महान संगीतज्ञ दीना नाथ मंगेशकर के यहाँ 8 सितंबर 1933 को जन्मी आशा का पूरे जीवन में उतार-चढ़ाव भरपूर रहे। दस साल की उम्र में अपना गायन जीवन शुरू करने वाली आशा ने सन 1949 में सिर्फ 16 साल की उम्र में अपने से 16 साल बड़े गणपत राव भोसले से प्रेम विवाह कर अपने पूरे परिवार को नाराज कर दिया था।

वह अपने संघर्षों को यदा-कदा याद भी करती थीं। बहुत कठिन समय था। उनके तीन

बच्चे हुए— दो बेटे हेमंत और आनंद और एक बेटी वर्षा। उन्होंने बेटी होने के लिए महालक्ष्मी मंदिर में मन्नत भी मांगी थी। पति और ससुराल के अत्याचार के बाद आशा ने तलाक लेकर 1959 में अपनी जिंदगी नए सिरे से शुरू की।

तीनों बच्चों की अच्छे से परवरिश करते हुए वह जल्द ही सफलता-लोकप्रियता के इतिहास रचने लगीं। हालांकि इन सफलताओं के बीच उन्हें गम भी मिले। पहले उनके बेटे हेमंत का निधन हो गया और फिर बेटी वर्षा भी नहीं रही। जिससे उन्हें गहरा सदमा लगा। लेकिन अपने दुख और सदमे को आशा भोसले ने दिल के भीतर तक ही रखा, बाहर नहीं आने दिया। कुछ समय पहले तो उनके दूसरे बेटे, आनंद को भी दिल का दौरा पड़ा था तो वह काफी विचलित हो गई थीं। लेकिन यहाँ प्रभु कृपा रही, आनंद जल्द स्वस्थ हो गए। आनंद ही उनका सारा काम और शेड्यूल संभालते रहे हैं।

आशा भोसले के करियर को शुरू से देखें तो उन्होंने उस दौर में इंडस्ट्री में कदम रखा, जब राजकुमारी, सुरैया, नूरजहां, शमशाद बेगम और गीता दत्त जैसी दिग्गज पार्श्व गायिकाओं का बोलबाला था। फिर उनकी अपनी बहन लता मंगेशकर भी 1949 में 'बरसात' के बाद बहुत मशहूर हो गई थीं। इसलिए आशा को अपने लिए अपनी अलग जगह बनाना बहुत मुश्किल था। आशा जी बताती थीं कि बचपन में उनकी और लता जी की आवाजें मिलती-जुलती थीं। खुद को अलग दिखाने के लिए उन्होंने अंग्रेजी गाने सुनना शुरू किया, ताकि वह एक हाई-पिच और अलग अंदाज विकसित कर सकें। यही उनकी पहचान बनी और उन्हें गजब की विविधता हासिल हुई।

हालांकि, लता जी और आशा जी को सदियों तक याद रखा जाएगा। लता जी शुरू से अपनी छोटी बहन को बहुत प्रेम करती थीं। हालांकि एक समय ऐसा भी आया जब दोनों के बीच दूरियां हो गईं, कुछ मनमुटाव हो गए। लेकिन बाद में सब ठीक भी हो गया।

